Sahitya Manthan
A Peer-Reviewed, Open Access e-journal
ISSN: 2582 6867, Website: http://www.sahityamanthan.in
Year-2, Issue-7, Continuous Issue-13, May - June 2022

"वैदिक धर्म, समाज और विज्ञान"

वेद भारत के प्राचीन ग्रंथ हैं । वेद, उपनिषद, ब्राह्मण, अरण्यक आदि को वैदिक साहित्य कहते हैं । वेद का अर्थ है ज्ञान अथवा पवित्र आध्यात्मिक ज्ञान । विद्वान लोग वैदिक काल और वैदिक साहित्य को दो भागों में बाँटते हैं- प्रारंभिक दौर का प्रतिनिधित्व ऋग्वेद करता है । इस काल को पूर्व वैदिककाल या ऋग्वैदिक काल भी कहा जाता है और बाद के दौर में शेष तीनों वेद (सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद), ब्राह्मण, अरण्यक और उपनिषद् आते हैं । इस काल को उत्तर वैदिक काल भी कहा जाता है । वैदिक साहित्य को समृद्ध होने में लंबा समय लगा । वैदिक साहित्य से हम वैदिक काल के लोगों के निवास के क्षेत्र, उनके खान-पान व रहन-सहन के विषय में जान पाते हैं । इस युग की संस्कृति को ही वैदिक संस्कृति कहते हैं माहात्म्य, संस्कृतियों का विकास सदैव नदियों के किनारे हुआ है। सिन्धु, सतलज, व्यास, सरस्वती नदियों के किनारे आर्यों ने ऋचाओं की रचना की, जिनका संग्रह ऋग्वेद है ।

धर्म:-

'धर्म' की व्युत्पत्ति संस्कृत के "धृ" धातु से धर्म शब्द बना है जिसका अर्थ धारण करना होता है, जो सबको धारण करे, जो सबका आधार हो वह धर्म है । फिर भी विभिन्न पंथों, संप्रदायों और विद्वानों के मुताबिक धर्म की सर्वमान्य परिभाषा तैयार की गई है । विभिन्न शब्दकोश में दिए अर्थ के अनुसार \'धर्म\' शब्द का अर्थ है - किसी वस्तु या व्यक्ति में सदा रहने वाली उसकी मूल वृत्ति, प्रकृति, स्वभाव, मूल गुण। एक अन्य शब्दकोश के अनुसार धर्म का अर्थ है - ईश्वर के प्रति मनुष्य का कर्तव्य। स्पष्टत: यह शब्द संस्कृत की \'धृ\' धातु से बना है, जिसका तात्पर्य है धारण करना, आलंबन देना, पालन करना ।

विभिन्न पंथों, मतों और संप्रदायों द्वारा जो नियम, मनुष्य को अच्छे जीवन यापन, जिसमें सबके लिए प्रेम, करूणा, अहिंसा, क्षमा और अपनत्व का भाव हो, ऐसे सभी नियम धर्म के तहत माने गए हैं । दुनिया के सभी प्रमुख धर्मों का सार लगभग एक ही है। सभी धर्म करूणा, दया, प्रेम, अहिंसा, कर्म, सत्य और अपरिग्रह जैसे नियमों से ही जुड़े हैं । धर्म वह है जो हमारे जीवन में आदर्श अनुशासन लाता है । आदर्श अनुशासन वह जिसमें व्यक्ति की विचारधारा और जीवनशैली सकारात्मक हो जाती है । जब तक किसी भी व्यक्ति की सोच सकारात्मक नहीं होगी, धर्म उसे प्राप्त नहीं हो सकता है ।

1. "आ प्रा रजांसि दिव्यानि पार्थिवा श्लोकं देव: कृणुते स्वाय धर्मणे। (ऋग्वेद - 4.5.3.3)

"धर्मणा मित्रावरुणा विपश्चिता व्रता रक्षेते असुरस्य माययां। (ऋग्वेद - 5.63.7)

यहाँ पर 'धर्म का अर्थ निश्चित नियम (व्यवस्था या सिद्धांत) या आचार नियम है ।

2. अभयं सत्वसशुद्धिज्ञार्नयोगव्यवस्थितिः। दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाधायायस्तप आर्जवम्।।

अहिंसा सत्यमक्रोधत्यागः शांतिर पैशुनम्। दया भूतष्य लोलुप्तवं मार्दवं ह्रीरचापलम्।।

3. तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता। भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत।। (गीता : 16/1, 2, 3)

यानि भय रहित मन की निर्मलता, दृढ़ मानसिकता, स्वार्थरहित दान, इंद्रियों पर नियंत्रण, देवता और गुरुजनों की पूजा, यश जैसे उत्तम कार्य, वेद शास्त्रों का अभ्यास, भगवान के नाम और गुणों का कीर्तन, स्वधर्म पालन के लिए कष्ट सहना, सरल, व्यक्तित्व, मन, वाणी तथा शरीर से किसी को कष्ट न देना, सच्ची और प्रिय वाणी, किसी भी स्थिति में क्रोध न करना, अभिमान का त्याग, मन पर नियंत्रण, निंदा न करना, सबके प्रति दया, कोमलता, समाज और शास्त्रों के अनुरूप-आचरण, तेज, क्षमा, धैर्य, पवित्रता, शत्रुभाव नहीं रखना - यह सब धर्म सम्मत गुण व्यक्तित्व को देवता बना देते हैं । वेदों के मुताबिक धर्म में उत्तम आचरण के निश्चित और व्यवहारिक नियम हैं ।

तैत्तिरियोपनिषद् में वेद विद्या पढ़ा चुकने के बाद आचार्य अपने शिष्य को शिक्षा देता है कि - "सत्यं वद। धर्मम् चर" सत्य बोलना और धर्म का आचरण करना । यहां भी धर्म शब्द का अर्थ वेद के ज्ञाता विद्वान् आचार्य द्वारा शिष्य को गुरूकुल में वेदों में उपदेश किए हुए शुभ कर्मों को आचरण में लाना कहा है ।

भाव यह है कि परमेश्वर ही धर्म अर्थात् शाश्वत् कर्तव्य -कर्मों, नियमों और सिद्धातों का निर्माता है जिनके आधार पर यह संसार टिका है । पुनः ऋग्वेद 8/43/24 का उपदेश है : "अध्यक्षं धर्मणाभिमम्" जिसका अर्थ है कि परमेश्वर समस्त धर्मों (वैदिक कर्म एवं नियमों) का अध्यक्ष है । महामुनि जैमिनी ने धर्म के विषय में अपने मीमांसा दर्शन सूत्र 1/2 में कहा कि " नोदना लक्षणः अर्थः धर्मः" अर्थात् धर्म का लक्षण वैदिक (नोदना) प्रेरणा से धर्म जाना जाता है । यहां प्रेरणा का तात्पर्य ईश्वर द्वारा वेदों में दी गई प्रेरणा से है (देखें ऋग्वेद मंत्र 2/12/6)। "अर्थ" शब्द से तात्पर्य है सुख प्राप्ति अर्थात मोक्ष प्राप्ति। भाव यह है कि ईश्वर ने जो धर्म (प्रेरणायुक्त शुभ कर्म) वेदों में कहा है उसको सुनने एवं आचरण में लाने से मनुष्य सब दुःखों का नाश करता है और ईश्वर कृत यह वैदिक धर्म अनादि एवं अविनाशी है । मनुष्य जो नियम-धर्म बनाते हैं, वे प्रलय तक तो टिक सकते हैं । परंतु प्रलय में नष्ट हो जाते हैं और दूसरा यह कि मनुष्यों द्वारा बनाए धर्म-कर्म इत्यादि कभी सुख नहीं दे सकते। धर्म का अर्थ ही वैदिक शुभ कर्मों को धारण करना कहा है। संस्कृतः सनातन धर्म माहात्म्य "असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय" "आत्मनःप्रतिकूलानि,परेषांनसमाचरेत्"

सनातन धर्म को यदि एक पंक्ति में कहना हो तो यही कहा जाएगा - जियो और जीने दो।

सर्वे भवंतु सुखिनःसर्वे संतु निरामयाः

सर्वे भद्राणि पश्यंतु मा कश्चिदद्दुःख भागभवेत।

सबके भले की कामना करने वाला दुनिया का एक मात्र धर्म सनातन धर्म ही है। वैदिक युग में (ऋग्वेद 10/90/16) यज्ञ को धर्म कहा गया है। यज्ञ का विधान संपूर्ण सृष्टि के कल्याण के लिए किया गया। वेदों के मंत्र हमें सिखाते हैं कि विश्व का कल्याण कैसे हो। वैदिक काल के बाद उपनिषद्काल में (कठोपनिषद् 1/2/14) कहा गया कि शास्त्रीय अनुष्ठान धर्म है। यानि वेदों में जो कहा गया है, वही धर्म है। मनुस्मृति (2/12)कहती है कि वेद, धर्मशास्त्र, सदाचार और आत्मसंतुष्टि धर्म के साक्षात लक्षण हैं। यानि वेद और शास्त्रों की वाणी का पालन करना, ऐसा आचरण करना जिससे किसी को कोई नुकसान या दु:ख न पहुँचे और ऐसे कार्य करना जिससे अपनी आत्मा को संतोष मिले वे सभी कार्य धर्ममय हैं।

"सत्यं वद। धर्मम् चर" , "धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम्" धर्म का तत्त्व हृदय गुहा में निहित अर्थात् अत्यन्त गूढ़ है, सरलता से समझ नहीं आता।

में व्यासमुनि जी पुन: कहते हैं- " धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षित:" अर्थात् नष्ट किया हुआ धर्म मनुष्य को मार देता है और रक्षा किया हुआ धर्म, रक्षा करता है।

अब हम ऋग्वेद मंत्र 8/98/1 पर विचार करें जिसमें धर्म का निर्माता परमेश्वर को कहा है अत: मनुष्य धर्म का निर्माता नहीं हो सकता। मंत्र में कहा "बृहते" सबसे महान् "धर्मकृते" धर्म के निर्माता अर्थात् कर्तव्य-कर्म/नियमों के निर्माता "इन्द्राय" परमेश्वर के लिए "बृहत् साम गायत" महान् सामवेद का गायन करो।

राष्ट्र की संस्कृति तभी विकसित होती है और जनता खुशहाल होती है जब उसकी राजनैतिक व सामाजिक उन्नति प्रथम उक्त धर्म को (अर्थात् धर्म के सत्य अविनाशी स्वरूप को) जानकर, उसको आचरण में लाया जाए। यदि धर्म वेद विरूद्ध होगा तब अन्धविश्वास, कुरीतियों, स्वार्थ, रूढ़िवाद, मिथ्या धारणा तर्कहीन युक्तियों पर टिका होगा। तब देश एवं समाज का तेजी से नाश प्रारंभ हो जाता है, ऋषियों द्वारा रचित शास्त्रों में जैसे कि योग-शास्त्र सूत्र 1/7 में किसी भी विषय अथवा विचार को सिद्ध करने के लिए वेद मंत्र का प्रमाण प्रस्तुत करने को कहा है।

सामाजिक स्थिति:-

ऋग्वेद के दसवें मंडल में चार वर्णों का उल्लेख मिलता है। वर्ण व्यवस्था कर्म आधारित थी। दसवें मंडल को परवर्ती काल माना जाता है । समाज पितृसत्तात्मक था। संयुक्त परिवार प्रथा प्रचलित थी। परिवार का मुखिया 'कुलप' कहलाता था। परिवार कुल कहलाता था। कई कुल मिलकर ग्राम, कई ग्राम मिलकर विश, कई विश मिलकर जन एवं कई जन मिलकर जनपद बनते थे। अतिथि सत्कार की परम्परा का सबसे ज्यादा महत्व था। एक और वर्ग 'पणियों' का था जो धनि थे और व्यापार करते थे। भिखारियों और कृषि दासों का अस्तित्व नहीं था। संपत्ति की इकाई गाय थी जो विनिमय का माध्यम भी थी। सारथी और बढई समुदाय को विशेष सम्मान प्राप्त था। अस्पृश्यता, सती प्रथा, परदा प्रथा, बाल विवाह आदि का प्रचलन नहीं था। शिक्षा एवं वर चुनने का अधिकार महिलाओं को था। विधवा विवाह, महिलाओं का उपनयन संस्कार, नियोग, गन्धर्व एवं

अंतर्जातीय विवाह प्रचलित था। वस्त्राभूषण स्त्री एवं पुरूष दोनों को प्रिय थे। जौ (यव) मुख्य अनाज था। शाकाहार का प्रचलन था। सोम रस (अमित जैसा) का प्रचलन था। नृत्य, संगीत, पासा, घुड़दौड़, मल्लयुद्ध, शुइकर आदि मनोरंजन के प्रमुख साधन थे। अपाला, घोष, मैत्रयी, विश्ववारा, गार्गी आदि विदुषी महिलाएं थीं। ऋग्वेद में अनार्यों (मुर्ख या दस्यु) को मृद्धवाय (अस्पष्ट बोलने वाला), अवृत (नियमों- व्रतों का पालन नहीं करने वाला), बताया गया है । सर्वप्रथम 'जाबालोपनिषद ' में चारों आश्रम ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रम का उल्लेख मिलता है ।

अर्थव्यवस्था:-

अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार पशुपालन एवं कृषि था। ज्यादा पाल्तुपशु रखने वाले गोमत कहलाते थे। चारागाह के लिए ' उत्यति ' या ' गव्य ' शब्द का प्रयोग हुआ है। दूरी को ' गवयुती ', पुत्री को दुहिता (गाय दुहने वाली) तथा युद्धों के लिए ' गविष्टि ' का प्रयोग होता था। राजा को जनता स्वेच्छा से भाग नजराना देती थी। आवास घास-फूस एवं काष्ठ निर्मित होते थे। ऋण लेने एवं देने की प्रथा प्रचलित थी जिसे ' कुसीद ' कहा जाता था। बैलगाड़ी, रथ एवं नाव यातायात के प्रमुख साधन थे।

कृषि:-

सर्वप्रथम शतपथ ब्राम्हण में कृषि की समस्त प्रक्रियाओं का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद के प्रथम और दसम मंडलों में बुआई, जुताई, फसल की गहाई आदि का वर्णन है। ऋग्वेद में केवल यव (जौ) नामक अनाज का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद के चौथे मंडल में कृषि का वर्णन है।

परवर्ती वैदिक साहित्यों में ही अन्य अनाजों जैसे- गोधूम(गेंहू), ब्रीही (चावल) आदि की चर्चा की गई है। काठक संहिता में 24 बैलों द्वारा हल खींचे जाने का, अथर्ववेद में वर्षा, कूप एवं नाहर का तथा यजुर्वेद में हल का ' सीर ' के नाम से उल्लेख है। उस काल में कृत्रिम सिंचाई की व्यवस्था भी थी।

पशुपालन:-

पशुओं का चारण ही उनकी आजीविका का प्रमुख साधन था। गाय ही विनिमय का प्रमुख साधन थी। ऋग्वैदिक काल में भूमिदान या व्यक्तिगत भू-स्वामित्व की धारणा विकसित नही हुई थी।

व्यापार:-

आरम्भ में अत्यन्त सीमित व्यापार प्रथा का प्रचलन था। व्यापार विनिमय पद्धति पर आधारित था। समाज का एक वर्ग 'पाणी' व्यापार किया करते थे। राजा को नियमित कर देने या भू-राजस्व देने की प्रथा नहीं थी। राजा को स्वेच्छा से भाग या नजराना दिया जाता था। पराजित कबीला भी विजयी राजा को भेंट देता था। अपने धन को राजा अपने अन्य साथियों के बीच बांटता था।

धातु एवं सिक्के : ऋग्वेद में उल्लेखित धातुओं में सर्वप्रथम धातू, अयस (ताँबा या कांसा) था। वे सोना (हिरव्य या स्वर्ण) एवं चांदी से भी परिचित थे। लेकिन ऋग्वेद में लोहे का उल्लेख नहीं है। ' निष्क ' संभवतः सोने का आभूषण या मुद्रा था जो विनिमय के काम में भी आता था।

उद्योग : ऋग्वैदिक काल के उद्योग घरेलु जरूरतों के पूर्ति हेतु थे। बढ़ई एवं धूकर का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्व था। अन्य प्रमुख उद्योग वस्त्र, बर्तन, लकड़ी एवं चर्म कार्य था। स्त्रियाँ भी चटाई बनने का कार्य करतीं थीं।

हिंदू समाज की बुनियादी पांच बातें तो है ही, (1.वंदना, 2.वेदपाठ, 3.व्रत, 4.तीर्थ, और 5.दान) लेकिन इसके अलावा निम्न को भी जानें:-

1.ब्रह्म ही सत्य है: ईश्वर एक ही है और वही प्रार्थनीय तथा पूजनीय है। वही सृष्टा है वही सृष्टि भी। शिव, राम, कृष्ण आदि सभी उस ईश्वर के संदेश वाहक है। हजारों देवी-देवता उसी एक के प्रति नमन हैं। वेद, वेदांत और उपनिषद एक ही परमतत्व को मानते हैं।

2. वेद ही धर्म ग्रंथ है: कितने लोग हैं जिन्होंने वेद पढ़े? सभी ने पुराणों की कथाएं जरूर सुनी और उन पर ही विश्वास किया तथा उन्हीं के आधार पर अपना जीवन जिया और कर्मकांड किए। ऋषियों द्वारा पवित्र ग्रंथों, चार वेद एवं अन्य वैदिक साहित्य की दिव्यता एवं अचूकता पर जो श्रद्धा रखता है वही सनातन धर्म की सुदृढ़ नींव को बनाए रखता है।

3. सृष्टि उत्पत्ति व प्रलय: सनातन हिन्दू धर्म की मान्यता है कि सृष्टि उत्पत्ति, पालन एवं प्रलय की अनंत प्रक्रिया पर चलती है। ब्रह्मा का दिन उदय होता है, तब सब कुछ अदृश्य से दृश्यमान हो जाता है और जैसे ही रात होने लगती है, सब कुछ वापस आकर अदृश्य में लीन हो जाता है। वह सृष्टि पंच कोष तथा आठ तत्वों से मिलकर बनी है। परमेश्वर सबसे बढ़कर है।

4. कर्मवान बनो: सनातन हिन्दू धर्म भाग्य से ज्यादा कर्म पर विश्वास रखता है। कर्म से ही भाग्य का निर्माण होता है। कर्म एवं कार्य-कारण के सिद्धांत अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपने भविष्य के लिए पूर्ण रूप से स्वयं ही उत्तरदायी है। प्रत्येक व्यक्ति अपने मन, वचन एवं कर्म की क्रिया से अपनी नियति स्वयं तय करता है। इसी से प्रारब्ध बनता है। कर्म का विवेचन वेद और गीता में दिया गया है।

5. पुनर्जन्म: सनातन हिन्दू धर्म पुनर्जन्म में विश्वास रखता है। जन्म एवं मृत्यु के निरंतर पुनरावर्तन की प्रक्रिया से गुजरती हुई आत्मा अपने पुराने शरीर को छोड़कर नया शरीर धारण करती है। आत्मा के मोक्ष प्राप्त करने से ही यह चक्र समाप्त होता है।

6. प्रकृति की प्रार्थना: वेद प्राकृतिक तत्वों की प्रार्थना किए जाने के रहस्य को बताते हैं। ये नदी, पहाड़, समुद्र, बादल, अग्नि, जल, वायु, आकाश और हरे-भरे प्यारे वृक्ष हमारी कामनाओं की पूर्ति करने वाले हैं अत: इनके

प्रति कृतज्ञता के भाव हमारे जीवन को समृद्ध कर हमें सद्गति प्रदान करते हैं। इनकी पूजा नहीं प्रार्थना की जाती है। यह ईश्वर और हमारे बीच सेतु का कार्य करते हैं। यही दुख मिटाकर सुख का सृजन करते हैं।

7 .सर्वधर्म समभाव:'आनो भद्रा कृत्वा यान्तु विश्वतः'- ऋग्वेद के इस मंत्र का अर्थ है कि किसी भी सदविचार को अपनी तरफ किसी भी दिशा से आने दें। ये विचार सनातन धर्म एवं धर्मनिष्ठ साधक के सच्चे व्यवहार को दर्शाते हैं। चाहे वे विचार किसी भी व्यक्ति, समाज, धर्म या सम्प्रदाय से हो। यही सर्वधर्म समभाव: है। हिंदू धर्म का प्रत्येक साधक या आमजन सभी धर्मों के सारे साधु एवं संतों को समान आदर देता है।

8 .यम-नियम: यम नियम का पालन करना प्रत्येक सनातनी का कर्तव्य है। यम अर्थात 1.अहिंसा, 2.सत्य, 3.अस्तेय, 4.ब्रह्मचर्य और 5.अपरिग्रह। नियम अर्थात 1.शौच, 2.संतोष, 3.तप, 4.स्वाध्याय और 5.ईश्वर प्राणिधान।

9. मोक्ष का मार्ग: मोक्ष की धारणा और इसे प्राप्त करने का पूरा विज्ञान विकसित किया गया है। यह सनातन धर्म की महत्वपूर्ण देन में से एक है। मोक्ष में रुचि न भी हो तो भी मोक्ष ज्ञान प्राप्त करना अर्थात इस धारणा के बारे में जानना प्रमुख कर्तव्य है।

10. संध्यावंदन: संधि काल में ही संध्या वंदन की जाती है। वैसे संधि पांच या आठ वक्त (समय) की मानी गई है, लेकिन सूर्य उदय और अस्त अर्थात दो वक्त की संधि महत्वपूर्ण है। इस समय मंदिर या एकांत में शौच, आचमन, प्राणायामादि कर गायत्री छंद से निराकार ईश्वर की प्रार्थना की जाती है।

11. श्राद्ध-तर्पण: पितरों के लिए श्रद्धा से किए गए मुक्ति कर्म को श्राद्ध कहते हैं तथा तृप्त करने की क्रिया और देवताओं, ऋषियों या पितरों को तंडुल या तिल मिश्रित जल अर्पित करने की क्रिया को तर्पण कहते हैं। तर्पण करना ही पिंडदान करना है। श्राद्ध पक्ष का सनातन हिंदू धर्म में बहुत ही महत्व माना गया है।

12..दान का महत्व: दान से इंद्रिय भोगों के प्रति आसक्ति छूटती है। मन की ग्रथियां खुलती है जिससे मृत्युकाल में लाभ मिलता है। मृत्यु आए इससे पूर्व सारी गांठे खोलना जरूरी है, जो जीवन की आपाधापी के चलते बंध गई है। दान सबसे सरल और उत्तम उपाय है।

14.संक्रांति: भारत के प्रत्येक समाज या प्रांत के अलग-अलग त्योहार, उत्सव, पर्व, परंपरा और रीतिरिवाज हो चले हैं। सभी में वह अपने मन से नियमों को चलाता है। कुछ समाजों ने मांस और मदिरा के सेवन हेतु उत्सवों का निर्माण कर लिया है। रात्रि के सभी कर्मकांड निषेध माने गए हैं। उन त्योहार, पर्व या उत्सवों को मनाने का

महत्व अधिक है जिनकी उत्पत्ति स्थानीय परम्परा, व्यक्ति विशेष या संस्कृति से न होकर जिनका उल्लेख वैदिक धर्मग्रंथों, धर्मसूत्रों और आचार संहिता में मिलता है। ऐसे कुछ पर्व हैं और इनके मनाने के अपने नियम भी हैं। इन पर्वों में सूर्य-चंद्र की संक्रांतियों और कुम्भ का अधिक महत्व है। सूर्य संक्रांति में मकर सक्रांति का महत्व ही अधिक माना गया है।

15.यज्ञ कर्म: वेदानुसार यज्ञ पांच प्रकार के होते हैं-1.ब्रह्मयज्ञ, 2.देवयज्ञ, 3.पितृयज्ञ, 4.वैश्वदेव यज्ञ और 5.अतिथि यज्ञ। उक्त पांच यज्ञों को पुराणों और अन्य ग्रंथों में विस्तार दिया गया है। वेदज्ञ सार को पकड़ते हैं विस्तार को नहीं।

16.वेद पाठ: कहा जाता है कि वेदों को अध्ययन करना और उसकी बातों की किसी जिज्ञासु के समक्ष चर्चा करना पुण्य का कार्य है, लेकिन किसी बहसकर्ता या भ्रमित व्यक्ति के समक्ष वेद वचनों को कहना निषेध माना जाता है।

विज्ञान:-

वेद, ब्राह्मण और उपनिषद् इस समय के विज्ञान के विषय में पर्याप्त जानकारी देते हैं । गणित की सभी शाखाओं को सामान्यत: गणित नाम से ही जाना जाता था जिसमें अंकगणित, रेखागणित, बीजगणित, खगोल विद्या और ज्योतिष सम्मिलित थे, वैदिक काल के लोग त्रिभुज के बराबर क्षेत्रफल का वर्ग बनाना जानते थे । वे वृत्त के क्षेत्रफलों के वर्गों के योग और अंतर के बराबर का वर्ग भी हबनाना जानते थे ! शून्य का ज्ञान था और इसी कारण बड़ी संख्याएँ दर्ज की जा सकीं । इसके साथ ही प्रत्येक अंक के स्थानीयमान और मूल मान की जानकारी भी थी । उन्हें घन, घनमूल, वर्ग और वर्गमूल की जानकारी थी और उनका उपयोग किया जाता था ।

वैदिक काल में खगोल विद्या अत्यधिक विकसित थी। वे आकाशीय पिंडों की गति के विषय में जानते थे और विभिन्न समय पर उनकी स्थिति की गणना भी करते थे । इससे उन्हें सही पंचांग बनाने तथा सूर्य एवं चंद्रग्रहण का समय बताने में सहायता मिलती थी । वे यह जानते थे कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है और सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करती है। चाँद, पृथ्वी के इर्द-गिर्द घूमता है । उन्होंने पिंडों के घूर्णन का समय ज्ञात करने तथा आकाशिय पिंडों के बीच की दूरियाँ मापने के प्रयास भी किए।

वैदिक सभ्यता काफी उन्नत प्रतीत होती है । लोग नगरों, प्राचीर से घिरे नगरों (पुरों) तथा गाँवों में रहते थे । वे दूर-दराज तक व्यापार करते थे ! विज्ञान पढ़ा जाता था और विज्ञान की विभिन्न शाखाएँ अत्यधिक विकसित थीं । उन्होंने सही पंचांग बनाए और चंद्र एवं सूर्य ग्रहणों के समय की पूर्व सूचना दी । आज भी हम उनकी विधि से गणना कर ग्रहण का समय ज्ञात कर सकते हैं।

हम इस पृथिवी पर रहते हैं। यह पृथिवी हमारे सौर मण्डल का एक ग्रह है। ऐसे अनन्त सौर्य मण्डल इस ब्रह्माण्ड में हैं। इस सृष्टि व ब्रह्माण्ड को किसने बनाया है? इसका समुचित उत्तर विश्व के वैज्ञानिकों के पास भी नहीं है। वेद और वैदिक धर्म के अनुयायी ऋषि-मुनि व वैदिक साहित्य के अध्येता इसका उत्तर देते है। वह बताते हैं कि हमारी यह सृष्टि सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वज्ञ, निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, अनादि, अनन्त, नित्य, अमर व अविनाशी परमात्मा ने बनाई व उत्पन्न की है। इस उत्तर की पुष्टि वेदाध्ययन से होती है। वेदाध्ययन सहित योगाभ्यास के अन्तर्गत समाधि अवस्था में इच्छित विषय का ध्यान करने से वह विषय योग साधक को साक्षात् उपस्थित हो जाता है। इसके द्वारा भी सृष्टि की उत्पत्ति का रहस्य व ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। यदि विश्व के वैज्ञानिक वैदिक साहित्य का अध्ययन सहित योगाभ्यास करें तो वह सृष्टि उत्पत्ति के यथार्थ रहस्य को जान सकते हैं। ऐसा करने पर वैज्ञानिकों की पूर्ण सन्तुष्टि हो सकती है।
जिन ग्रन्थों में विमानों का उल्लेख है वह सब ग्रन्थ ईसाई मत व विज्ञान के उद्भव एवं विकास से पूर्व के हैं। हमारे देश में सृष्टि के आरम्भ से ही विमान होते थे। उन्हीं की सहायता से हमारे देश के लोग संसार के अनेक भागों में गये और वहां-वहां बस्तियां व उपनिवेश बसाये। प्राचीन काल में महर्षि भारद्वाज ने 'वैदिक विमान शास्त्र' की रचना की थी। यह ग्रन्थ वर्तमान समय में सुलभ है। विमान शब्द उनके शब्द कोषों में था। यह सब लिखने का तात्पर्य यही है कि प्राचीन भारत वा आर्यावर्त ज्ञान व विज्ञान से सम्पन्न था।

हमारी यह सृष्टि अनादि काल से बनी हुई नहीं है। यह ईश्वर द्वारा इस कल्प के आरम्भ में बनाई गई है। लगभग 1.96 अरब वर्ष इस सृष्टि को बने हुए हो चुके हैं। समय के साथ इसमें भी ह्रास होता है। ईश्वर ने इस समस्त ब्रह्माण्ड व इसके पिण्डों, ग्रह, उपग्रहों आदि को धारण किया हुआ है। ईश्वर का एक दिन व एक रात्रि होती है। ईश्वर का दिन 4.32 अरब वर्षों का होता है और इतनी ही रात्रि की अवधि होती है। रात्रि की अवधि को प्रलयावस्था कहा जाता है। ईश्वर के एक दिन की अवधि 4.32 अरब वर्ष में वह प्रकृति से सृष्टि को बनाकर इसका संचालन करता है। अवधि पूर्ण होने पर उसके द्वारा इसकी प्रलय होती है। प्रलय की अवधि में सृष्टि अपने कारण मूल प्रकृति में विलीन रहती है। रात्रि व प्रलय की अवधि पूर्ण होने पर परमात्मा अनादि उपादान कारण सत्व, रज व तम गुणों वाली त्रिगुणात्मक प्रकृति से इस ब्रह्माण्ड की रचना करते हैं। रात्रि व दिन की तरह से यह सृष्टि बनती व बिगड़ती रहती ।

हम वेद शास्त्रों का अध्ययन करें तो हमें जीवन जीने का वह सर्वोत्तम तरीका, जिसे राजमार्ग भी कह सकते हैं मिल जाएगा।जो इस संसार को सुखी, समृद्ध, प्रेममय और ईश्वर मय बनाता है, किंतु आवश्यकता इस बात की है कि धर्म शास्त्रों में निहित उस अनुभव सिद्ध, प्रामाणिक एवं उच्चतर ज्ञान को गहराई से समझें और समझने के साथ-साथ जीवन में अपनाएं।क्योंकि पढने़ कीअपेक्षा समझना, समझने की अपेक्षा उस पर गहन चिंतन करना और चिंतन करने से भी उसे आचरण में उतारना अधिक महत्वपूर्ण है।

सन्दर्भ –

- Being Different, Rajiv Malhotra, Pg. 259 – 262 (Read here – http://www.huffingtonpost.com/rajiv-malhotra/dharma-religion_b_875314.html)
- http://adhyatmikprakshbindu.blogspot.in/2016/04/blog-post.html
- https://www.huffingtonpost.com/rajiv-malhotra/hypocrisy-of-tolerance_b_792239.html

---

डॉ • गायत्रीबेन सी • बारोट

का•का• आचार्या ,

नीमा गल्सॅ आर्ट्स कॉलेज गोज़ारिया ।